AMOGHVARTA
ISSN : 2583-3189

अश्वघोष विरचित सौन्दरनन्दम महाकाव्य का काव्य वैभवः एक अध्ययन

ORIGINAL ARTICLE

Author
डॉ. सिद्धार्थ शंकर सिंह
प्राचार्य
महाकवि कालिदास सूर्यदेव महाविद्यालय
त्रिमुहान, चंदौना, जिला– दरभंगा, बिहार, भारत

शोध सार

लौकिक संस्कृत काव्य साहित्य में अश्वघोष की प्रतिभा अप्रतिम है। इसका प्रमाण उनके द्वारा लिखा गया उनका महान ग्रंथ सौन्दरनंदम है, जो बुद्ध के उपदेश उनकी जीवन चर्चा और नंद के जीवन परिवर्तन के ऊपर आधारित है। इस महाकाव्य में संस्कृत साहित्य के समस्त रसों का आरोह और अवरोह है। वास्तव में इस महाकाव्य का नायक नंद है जो काम भावना से अत्यन्त अलोडित रहता है, लेकिन बुद्ध के उपदेश से उसका जीवन परिवर्तन हो जाता है। इस महाकाव्य का वैभव अत्यंत अतुलनीय है। भाषा और भाव का प्रवाह समग्र रूप से देखने को मिलता है। काव्य के रस छंद और अलंकारों का विलक्षण सामंजस्य इसमें इस काव्य में देखने को मिलता है। संस्कृत ''वाङ्मय'' अतिविपुल है। काव्य–मीमांसा में राजशेखर कहते हैं कि वाङ्मय ''शास्त्र'' और ''काव्य'' के भेद से दो प्रकार के होते हैं। काव्यज्ञान के लिए शास्त्रज्ञान आवश्यक होता है जैसे बिना दीपक के पदार्थों का प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं किया जा सकता, उसी प्रकार शास्त्र–ज्ञान के बिना काव्य–ज्ञान असम्भव है। शास्त्र दो प्रकार के होते हैं अपौरुषेय और पौरुषेय। ''वेद'' अपौरुषेय शास्त्र है जिसे ''श्रुति'' भी कहते हैं क्योंकि वेद को हम परम्परा से सुनते आ रहे हैं। इस वेद के दो भाग हैं मन्त्र और ब्राह्मण। याज्ञिक क्रिया कलाप को बताने वाले भाग ''मन्त्र'' हैं जबकि मन्त्रों का स्तुति, निन्दा, निर्वचन, विधि, निषेध एवं क्रिया में विनियोग आदि करने वाला भाग ''ब्राह्मण'' कहलाता है। ऋग्यजुःसाम वेदों को त्रयी कहते हैं। छन्दोबद्ध भाग ऋक् है। सस्वर गेय भाग साम कहलाता है। बिना छन्द और गीति के गद्यभाग को यजुष् कहते हैं। अथर्ववेद चौथा वेद है। इस प्रकार ऋक, साम, यजुष और अथर्व चार वेद हैं। इतिहासवेद, धनुर्वेद, गान्धर्ववेद और आयुर्वेद ये चार उपवेद हैं। शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरूक्त, छन्द और ज्योतिष ये छः वेदांग हैं। यायावरीय राजशेखर अलंकारशास्त्र को वेद का सातवाँ अंग मानते हैं।

मुख्य शब्द

अश्वघोष, दार्शनिक, सौन्दरनन्दन, महाकाव्य, अलंकार, साहित्य.

प्रस्तावना

अश्वघोष का व्यक्तित्व ऐतिहासिक है। वे भारत के ही नहीं विश्व के महान दार्शनिक हैं। धर्म और दर्शन की सभी परम्पराओं में अश्वघोष का नाम आदर के साथ लिया जाता है लेकिन उनके विषय में प्रामाणिक साक्ष्य बहुत कम हैं। "प्राचीन बौद्ध दार्शनिक अश्वघोष के जीवन भारती के संबंध में निश्चित जानकारी नहीं है। परोक्ष साक्ष्यों

के आधार पर सामान्यतः इन्हें अयोध्या (साकेत) का निवासी माना जाता है। उनकी माता का नाम सुवर्णाक्षी था। ये कनिष्क के समकालीन थे और इनका समय 100 ई. पू. से 50 ई. पू. के बीच माना जाता है। अश्वघोष की रचनाएं कौन–कौन सी हैं, इस पर विवाद है किंतु तीन रचनाएं निश्चित रूप से उनकी मानी जाती हैं– ''बुद्ध–चरित'', ''सौन्दर्यानंद'' और ''शारिपुत्र प्रकरण''। ''बुद्ध–चरित'' 28 सर्गों का महाकाव्य है। इसमें भगवान बुद्ध के जीवन, उपदेश और सिद्धांतों का काव्यात्मक वर्णन है। ''सौन्दर्यानंद'' 18 सर्गों का महाकाव्य है। इसमें गौतम बुद्ध के सौतले भाई नंद तथा उसकी पत्नी सुंदरी की कथा है। ''शारिपुत्र प्रकरण'' एक नाट्य रचना है। इसमें समाज के पथभ्रष्ट समुदाय के चित्रण के साथ–साथ मौदल्यायन तथा शारिपुत्र को बुद्ध के द्वारा शिष्य बनाए जाने की कथा वर्णित है।

अश्वघोष बौद्ध धर्म की हीनयान शाखा के दार्शनिक माने जाते हैं। विद्वानों का मत है कि बौद्ध मत में दीक्षित होने से पूर्व वे ब्राह्मण थे। उन्हें वैदिक और पौराणिक साहित्य का ज्ञान था इसलिए उन्होंने अपने विचार स्वतंत्र रूप से व्यक्त किए। इस कारण हीनयान शाखा में उनको पर्याप्त सम्मान नहीं मिल सका। उनका धार्मिक उत्साह अंध विश्वासी नहीं था। अश्वघोष ने कुषाण सम्राट कनिष्क के समय में आयोजित ''बौद्ध संगीति'' में भी भाग लिया था। एक मत के अनुसार वही इस ''संगीति'' के अध्यक्ष थे। यह भी कहा जाता है कि कनिष्क ने जिस समय मगध नरेश को पराजित किया, उसी समय वह अश्वघोष को सम्मानपूर्वक पेशावर ले गया था।"[1]

शोध भूमि

महाकवि अश्वघोष का स्थान संस्कृत साहित्य में बहुत ही आदर के साथ लिया जाता है। उनके काव्य वैभव के लिए उनको बहुत उच्च स्तर का स्थान मिला है। वे कवि के साथ साथ महान दर्शन के ज्ञाता भी हैं। "महाकवि अश्वघोष संस्कृत साहित्य के यशस्वी एवं अत्यधिक समादृत कवि हैं। बुद्धचरित और सौन्दरन्द महाकाव्य उनकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं। भाषा–सौष्ठव, अलंकार–विधान एवं काव्यगुणों से समृद्ध उनकी कृतियाँ अत्यन्त प्राञ्जल एवं हृदयग्राही हैं। इन काव्यग्रन्थों के माध्यम से बौद्ध सिद्धान्तों का सरल एवं सरस भाषा में जन–जन तक प्रचार–प्रसार करना उनका उद्देश्य था। विशेषतः आभिजात्य वर्ग को संस्कृत भाषा के माध्यम से बौद्ध सिद्धान्तों की ओर आकृष्ट करना उनकी रचना का प्रयोजन था। वे अच्छे संगीतज्ञ भी थे। प्रायः सभी इतिहास विशेषज्ञ महाकवि अश्वघोष सम्राट् कनिष्क का समकालीन मानते हैं। बौद्ध परम्परा भी इसके विरुद्ध नहीं है। कहा जाता है कि बौद्धों की तृतीय संगीति सम्राट् कनिष्क द्वारा जालन्धर या कुण्डलवनमहाविहार में आयोजित की गई थी, जिसके अध्यक्ष आचार्य वसुमित्र तथा उपाध्यक्ष महाकवि अश्वघोष थे।"[2]

पुराण, आन्वीक्षिकी, मीमांसा और स्मृतितन्त्र ये चार पौरुषेय शास्त्र हैं। इतिहास पुराण का एक प्रविभेद ही है, जो ''परक्रिया'' और ''पुराकल्प'' दो प्रकार के होते हैं। रामायण एक नायक पर आधारित होने के कारण परक्रिया नामक इतिहास है जबकि महाभारत अनेक नायकों पर आधारित होने से पुराकल्प इतिहास है। आन्वीक्षिकी अर्थात् तर्कविद्या दो प्रकार की है पूर्वपक्ष और उत्तरपक्ष। पूर्व पक्ष में जैन, बौद्ध और चार्वाक दर्शन आते हैं जबकि उत्तर पक्ष में सांख्य, योग और वैशेषिक दर्शन। इस प्रकार ये तर्कविद्या के छः भेद हैं। इन तर्कों में भी वाद, जल्प और वितण्डा तीन प्रकार की कथाएँ होती हैं। वेद वाक्यों का विविध तर्कों से विवेचन करनेवाली मीमांसा है। यह दो प्रकार की है विधिविवेचनी (कर्म–मीमांसा ध् पूर्वमीमांसा) और ब्रह्मविवेचनी अर्थात् वेदान्तशास्त्र। वेदों के अर्थों का अनुसरण करके धर्म का विवेचन करनेवाले धर्मशास्त्र को स्मृति कहते हैं। स्मृतियाँ अट्ठारह हैं। भारतीय आचार्य परम्परा में जिन चौदह विद्याओं का उल्लेख मिलता है उनमें यही चार वेद, छः वेदांग और चार शास्त्रों का समावेश किया गया है। "सकल विद्यास्थानैकायतनं पंचदशं काव्यं विद्यास्थानम्श् इति यायावरीयः। गद्यपद्यमयत्वात् कविधर्मत्वात् हितोपदेशकत्वाच्च। तद्धि शास्त्राण्यनुधावन्ति।"[3] अर्थात् यायावरीय राजशेखर के मत में इन चौदह विद्याओं के अतिरिक्त ''काव्य'' पंद्रहवाँ विद्यास्थान है क्योंकि यही चौदहों विद्याओं का एकमात्र आधार है। इस काव्य के गद्य–पद्यमय होने, कवि का कर्म होने और हितोपदेश होने के कारण सभी शास्त्र इस काव्य–विद्या का अनुसरण करते हैं। कुछ विद्वानों का मानना है कि पूर्वकथित चौदह विद्याओं के साथ वार्त्ता, कामसूत्र, शिल्पशास्त्र और दण्डनीति इन चारों विद्याओं को समाविष्ट कर लेने पर "अष्टादशविद्यास्थानानि"[4] का मत भी प्रसिद्ध है। आचार्य

कौटिल्य चार विद्या मानते हैं आन्वीक्षिकी, त्रयी, वार्ता और दण्डनीति। आन्वीक्षिकी और त्रयी के बारे में ऊपर कहा जा चुका है। कृषि, पशुपालन और व्यापार इन तीनों का संयुक्त नाम वार्ताशास्त्र है। आन्वीक्षिकी, त्रयी और वार्ता इन तीन विद्याओं की प्राप्ति और प्रयोग का साधन दण्डनीति है क्योंकि दण्ड के बिना इन तीनों के द्वारा सांसारिक स्थिति का निर्वाह असम्भव है। राजशेखर ''साहित्यविद्या'' को ''पंचमीविद्या'' मानते हैं ''पञ्चमी साहित्यविद्या'' इति यायावरीयः।"[5] उनका कहना है कि आन्वीक्षिकी, त्रयी, वार्ता और दण्डनीति के अतिरिक्त पाँचवीं विद्या ''साहित्यविद्या'' है। यह साहित्य विद्या उक्त चारों विद्याओं का सारतत्त्व है। धर्म और अर्थ की प्राप्ति ही इन विद्याओं का मुख्य फल है। इन शास्त्रों का ज्ञाता ''शास्त्रकवि'' होता है जो शब्दों के गूढ़ अर्थ को प्रकट करता है, संदिग्ध अथवा संगतिरहित अर्थ का स्पष्टीकरण करता है तथा संक्षिप्त को विस्तृत और विस्तृत को संक्षिप्त करने की क्षमता रखता है। शब्द और अर्थ को यथावत् सहभाव को बताने वाली विद्या ''साहित्य–विद्या'' कहलाती है। इस विद्या की चौंसठ उपविद्याएँ हैं जिन्हें विद्वानों ने ''कला'' कहा है। उपविद्याएँ या कलाएँ काव्य का जीवन हैं। राजशेखर कहते हैं: ''शब्दार्थयोर्यथावत्सहभावेन विद्या साहित्यविद्या। उपविद्वास्तु चतुःषष्टिः। ताश्च कला इति विदग्धवादः। स आजीवः काव्यस्य।"[6] तत्रैव पृष्ठ 12 जिस प्रकार नदियों के प्रवाह प्रारम्भ में तुच्छ अर्थात् अत्यल्प पतले होते हैं और आगे बढ़ने पर क्रमशः विस्तृत होते जाते हैं उसी प्रकार शास्त्रों का आरम्भ भी लघु और पुनः उत्तरोत्तर विपुल हो जाते हैं। ऐसे सभी शास्त्र समादरणीय हैं– ''सरितामिव प्राहास्तुच्छाः प्रथमं यथोत्तरं विपुलाः। ये शास्त्रसमारम्भा भवन्ति लोकस्य ते वन्धाः।।"[7] सौन्दरनन्दम् के विधा पर विचार करते समय हमें सर्वप्रथम यह समझना चाहिए कि यह मूलतः एक काव्य है, जो पद्यों में निबद्ध है अर्थात् छन्दमयी रचना है। इस साहित्यिक विधा का उद्भव वैदिक सूक्तों में दिखाई देता है। वस्तुतः रमणीय शब्दों के द्वारा किसी विषय का आकर्षक चित्रण करना या विवरण प्रस्तुत करना काव्य कहता है। काव्य शब्द अत्यन्त प्राचीन है जिसका सामान्य अर्थ है। कवि–कर्म श्कवेः कर्म काव्यम्। कवि शब्द में ण्यत् प्रत्यय करने पर काव्य शब्द बनता है – कविण्यत् = काव्य। संस्कृत के कु या कव् धातु से कवि शब्द बना है जिसका अर्थ होता है विवरण देना, चित्रणकरना, ध्वनि करना आदि। कवि को स्मृति, मति और प्रज्ञा इन तीनों प्रकार की बुद्धि से सम्पन्न होना चाहिए क्योंकि ये उनके लिए उपकारक ही नहीं आवश्यक भी हैं। पूर्वानुभूत विषयों का स्मरण रखनेवाली बुद्धि ''स्मृति'' कहलाती है ''अतिक्रान्तस्यार्थस्य स्मत्रीं स्मृतिः।"[8] वर्त्तमान विषयों को मनन करने वाली बुद्धि का नाम मति है "वर्त्तमानस्य मन्त्री मतिः।"[9] जबकि भविष्यदर्शिनी या दीर्घदर्शिनी बुद्धि को प्रज्ञा कहते हैं ''अनागतस्य प्रज्ञात्री प्रज्ञेति।"[10] प्रतिभासम्पन्न महाकवि प्रतिभा प्रकर्ष के कारण अप्रत्यक्ष वस्तुओं का प्रत्यक्ष के समान वर्णन करते हैं। प्रतिभा दो प्रकार की होती है कारयित्री और भावयित्री। कारयित्री प्रतिभा कवि की उपकारक होती है। कवि के श्रम और अभिप्राय को पूर्ण करने वाली प्रतिभा भावयित्री है। वस्तुतः भावयित्री प्रतिभा भावक या आलोचक का उपकार करती है। कारयित्री प्रतिभा सहजा, आहार्या और औपदेशिकी तीन प्रकार की होती है। प्रतिभासम्पन्न कवि भी सारस्वत, आभ्यासिक और औपदेशिक के भेद से तीन प्रकार के होते हैं। राजशेखर अपनी काव्यमीमांसा में कहते हैं कि सारस्वत्त कवि स्वतन्त्रता के साथ रचना करता है, आभ्यासिक कवि एक सीमित रूप से काव्य–निर्माण करता है जबकि औपदेशिक कवि सुन्दर किन्तु सारहीन रचना करता है ''सारस्वतः स्वतन्त्रः स्याद्भवेदाभ्यासिको मितः। औपदेशिककविस्वत्र वल्गु फल्गु च जल्पति।।"[11] कहा जाता है कि बुद्धिमत्ता, काव्य एवं उसके अंगभूत विद्याओं में अभ्यास–कर्म और साथ ही दैवी शक्ति तीनों एक साथ दुर्लभ होते हैं। उक्त तीनों गुणों एकत्रित होना उत्कर्ष है। कवित्व के लिए यह ''उत्कर्ष'' श्रेष्ठ है क्योंकि ''प्रतिभाव्युत्पत्तिमांश्च। कविः कविरित्युच्यते।"[12]

कवि के तीन भेद काव्यशास्त्रियों ने बताये हैं शास्त्रकवि, काव्यकवि और उभयकवि। शास्त्रकवि मुख्यतः तीन प्रकार होते हैं शास्त्र का निर्माण करने वाला, शास्त्र में काव्य का निवेश करने वाला और काव्य में शास्त्रीय अर्थों का निवेश करने वाला। काव्यकवि मुख्यतः आठ प्रकार के कहे गयो हैं रचनाकवि, शब्दकवि, अर्थकवि, अलंकारकवि, उक्तिकवि, रसकवि, मार्गकवि और शास्त्रार्थकवि। इनमें शब्द कवि तीन प्रकार के हो सकते हैं नामकवि, आख्यातकवि और नामाख्यातकवि। शब्दालंकारकवि और अर्थालंकारकवि। अलंकारकवि दो प्रकार के होते हैं। रचना, शब्द, अर्थ, अलंकार, उक्ति, रस, मार्ग और शास्त्रार्थ इन आठों गुणों से युक्त कवि महाकवि होता हैः "सर्वगुणयोगी महाकवि"।[13]

जो किसी एक महान् या पूर्ण प्रबन्धकाव्य का निर्माण करता है, वह महाकवि कहा जाता है "योऽन्यतरप्रबन्धे

प्रवीणः स महाकविः।"[14] कवित्व की यह एक विशिष्ट अवस्था है। अश्वघोष एक महाकवि हैं और सौनदरनन्दम् एक पूर्ण प्रबन्धकाव्य। भारतीय काव्यशास्त्रियों ने काव्य को परिभाषित करते हुए मतैक्यता नहीं रखी है। काव्यशास्त्रीय परम्परा में अनेक आचार्यों ने काव्य को परिभाषित किया है। यद्यपि उपर्युक्त सभी लक्षण काव्य के स्वरूप को प्रकट करने में सक्षम हैं तथापि आचार्य दण्डी द्वारा प्रस्तुत काव्य का स्वरूप या परिभाषा सुन्दर, सरल और प्रभावोत्पादक है। जो वाक्य अलौकिक चमत्कार से बलपूर्वक सामाजिकों के मन को अपनी ओर खींचकर आनंदित करता है, उसे ही काव्य कहा जाता है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि ''अलौकिक चमत्कारपूर्ण सहृदय हृदयावगाही अर्थ से अलंकृत पदो के समूह को काव्य कहा जाता है।'' जिन वाक्यों के द्वारा प्राप्त सुख या आनन्द अलौकिक चमत्कारपूर्ण या लोकोत्तर नहीं है उसे काव्य नहीं कहा जा सकता।

रामायण संस्कृत साहित्य का आदि काव्य है। ऋषि प्रणीत होने के कारण रामायण को आर्ष काव्य कहते हैं। महाभारत भी इस दृष्टि से आर्ष काव्य ही है। रामायण और महाभारत ने परवर्ती कवियों को विषय–वस्तु, वर्णन विधि तथा भाषा–शैली दी है। रामायण के बाद संस्कृत काव्यधारा लौकिक काव्य की दिशा में अग्रतर होती गई। छन्द शास्त्र में लौकिक छन्दों की व्यवस्था की गई। पाणिनि, वररूचि, पतंजलि जैसे वैयाकरणों ने भी काव्यसृजन कर साहित्यिक परिवेश को मजबूती प्रदान की। कालिदास और अश्वघोष तक यह परम्परा उत्तरोत्तर विकसित होती हुई चिरनवीनता को प्राप्त हुई। अश्वघोष ने बुद्ध और उनसे सम्बन्धित घटनाओं के आधार पर काव्य सृजन की नवीन धारा का प्रादुर्भाव किया जो मूलतः वाल्मीकि के रामायण से अनुप्राणित है। अश्वघोष रचित ''सौन्दरनन्दम्'' विधा की दृष्टि से एक महाकाव्य है। इसमें महाकाव्य के काव्यशास्त्रीय लक्षण घटित होते हैं। उपर्युक्त लक्षण की कसौटी पर कसने पर हमें निम्नलिखित बातें सौन्दरनन्दम में अवश्य मिलती हैं। सर्वप्रथम उन तथ्यों को देख लेना समीचान है। यथा– सौन्दरनन्दम् सर्गबद्ध रचना है। इसमें अष्टादश सर्ग हैं। प्रत्येक शुभ कार्य के आरम्भ में किसी न किसी रूप में अपने इष्ट का स्मरण किया जाने को साहित्य में मंगलाचारण कहा जाता है। संस्कृत के महाकाव्यों में इसकी परम्परा है। आशीर्वादात्मक, नमस्कारात्मक और वस्तुनिर्देशात्मक इसके तीन भेद होते हैं। ''सौन्दरनन्दम्'' के आरम्भ में ''ओं नमो बुद्धाय'' से नमस्कारात्मक मंगलाचरण हुआ है। ''आशीर्नमस्क्रिया वस्तुनिर्देशो वाऽपि तन्मुखम्'' के अनुसार प्रथम सर्ग के प्रथम पद्य में गौतम कपिल आदि का नामोल्लेख कर पद्य लिखा गया है। अतएव वस्तुनिर्देशात्मक मंगलाचरण प्राप्त होता है गौतमः कपिलो नाम मुनिर्धर्मभृतां वरः। बभूव तपसि श्रान्तः काक्षीवानिव गौतमः।।[15]

सौन्दरनन्दम् की कथा बुद्ध से सम्बन्धित है, अतएव इतिहास प्रसिद्ध है। पालि साहित्य में नन्द की कथा है। साथ ही कवि की मौलिक कल्पना भी महाकाव्य के अनुरूप ही हुई है। अपनी प्रतिभा से अश्वघोष ने अनेक कल्पनाओं को सच साकार किया है। धर्म, अर्थ काम, मोक्ष रूप पुरूषार्थचतुष्ट्य में सौन्दरनन्दम् के नायक नन्द को मोक्ष रूप पुरुषार्थ की सिद्धि हुई है। धर्म, अर्थ, काम का सम्यक् निरूपण किया गया है।

सौन्दरनन्दम् का नायक नन्द है। इसके उच्चावच्च चरित्र का निरूपण कवि ने किया है। नन्द को सामान्य कामी पुरूष के स्वरूप से प्रकर्ष के बाद त्यागी और अर्हत के रूप में पाठकों के समक्ष उपस्थित किया गया है। उसकी अधीरता में भी धैर्य छिपा है ''नगरार्णवशैलर्तुचन्द्रार्कोदयवर्णनैः। उद्यद्यानसलिलक्रीडामधुपानरतोत्सवैः।।'' के अनुसार ही सौन्दरनन्दम् महाकाव्य में कपिलवस्तु नगर का सुन्दर वर्णन अश्वघोष ने किया है। यथा में द्रष्ट्व्य है–कपिलवस्तु नगर का एक दृश्य कवि के शब्दों "पाण्डुराट्टालसुमुखं सुविभक्तान्तरापणं। हर्म्यमालापरिक्षिप्तं कुक्षिं हिमगिरेरिव।।"[16]

यथा – नन्दनवन का वर्णन "रक्तानि फुल्लाः कमलानि यत्र प्रदीपवृक्षा इव भान्ति वृक्षाः। प्रफुल्लनीलोत्पलराकहिणोऽये सोन्मीलिताक्षा इव भान्ति वृक्षाः।।"[17] इसी प्रकार स्वाभाविक और हृदयावर्जक हिमालय वर्णन "चलत्कदम्बे हिमवन्नितम्बे तरौ प्रलम्बे चमरी ललम्बे। छेत्तुं विलग्नं न शशाक बालं कुलोदुगतां प्रीतिमिवार्यवृत्तः।।"[18]

सौन्दरनन्दम् में कवि ने यथायोग्य रसों और भावों को स्थान दिया है। नन्द और सुन्दरी के मिलन के प्रसंग में कवि का भाव तथा रस प्रयोग द्रष्टव्य जिसमें कवि कहता है कि यदि नन्द उस सुन्दरी को प्राप्त नहीं करता या यदि आनत भ्रु वाली सुन्दरी ही उसे प्राप्त नहीं करती तो वे दोनों निश्चय ही एक–दूसरे के अभाव में वैसे ही शोभित

नहीं होते जैसे एक दूसरे से अलग होकर रात्रि और चन्द्रमा। कवि के ही शब्दों में तां सुन्दरीं चेन्न लभेत नन्दः सा वा निषेवेत न तं नतभ्रुः। द्वन्द्वं ध्रुवं तद्विकलं न शोभेतान्योन्यहीनाविव रात्रिचन्द्रौ।।"[19] लक्षण के अनुसार ही कवि ने सौन्दरनन्दम् में विप्रलम्भ श्रृंगार का सुन्दर परिपाक किया है। भार्या विलाप और नन्द विलाप का प्रसंग इसके लिए द्रष्टव्य हैं, जहाँ धीमी धड़कन लिए सुन्दरी का दर्दीला दिल और तड़पीले जख्मों से पीडित सिसकी का स्वर एक साथ पाठकों को रसाप्लावित करता है। यथा "सा दुःखिता भर्तुरदर्शनेन कामेन कोपेन च दह्यमाना। कृत्वा करे वक्त्रमुपोपविष्टा चिन्तानदीं शोकजलां ततार।।"[20] इसी प्रकार नन्द की स्थिति, जब उसके विश्वासों ने ठोकर खाई तब उसके हृदय की पीर कसक उठी और फिर नन्द की भींगी पलकों को दुलराती उसकी स्मृति से पाठक भाव विभोर होने लगता हैः "प्रियां प्रियायाः प्रतनु प्रियंगुं निशाम्य भीतामिव निष्पतन्तीम्।सस्मार तामश्रुमुखीं सवाष्पः प्रियां प्रियंगुप्रसवावदाताम्।।"[21] इस प्रकार कवि ने विप्रलम्भ श्रृंगार का प्रसंगानुकूल अभिनव प्रयोग किया है।

पद्यों की संख्या के अनुसार सौन्दरनन्दम् के सर्ग न बहुत बड़े हैं और न बहुत छोटे। सभी सर्गों में लगभग समानता ही है। सबसे बड़ा सर्ग सोलहवाँ है जिसमें 98 पद्य हैं जबकि सबसे छोटा सर्ग तीसरा है जिसमें 42 पद्य हैं। शेष सारे सर्ग लगभग 50 से 70 पद्यों वाले हैं। पहले में 62, दूसरे में 65, तीसरे में 42, चौथे में 46, पांचवें में 53, छठे में 49, सातवें में 52, आठवें में 62, नवम में 51, दसवें में 64, ग्यारहवें में 62, तेरहवें में 56, चौदहवें में 52, पंद्रहवें में 69, सोलहवें में 98, सत्रहवें में 73 और अठ्ठारहवें में 64 पद्य हैं। सर्ग में प्रायः एक ही छन्द प्रयुक्त है। सर्गान्त में छन्द बदले गये हैं। प्रायः अनुष्टप्, उपजाति जैसे कर्णमधुर छन्दों का ही प्रयोग हुआ है।

सौन्दरनन्दम् भिन्न वृतान्त, मनोरंजन समर्थ, उपमादि अलंकारों का यथास्थान सुन्दर समावेश आदि विशेषताओं से युक्त है। इसमें मुख, प्रतिमुख, गर्भ, विमर्श और निर्वहण सन्धि से युक्त कथानक है।

उपर्युक्त विशेषताओं के आधार पर कहा जा सकता है कि अश्वघोष रचित सौन्दरनन्दम् विधा की दृष्टि से निश्चय ही एक महाकाव्य है जिसमें शास्त्रीय परम्परा के अनुसार निर्धारित लक्षणों का पालन कवि ने किया है। स्पष्ट है कि महाकवि अश्वघोष रचित सौन्दरनन्दम् लोकमांगलिक जीवन के महत्त्वपूर्ण औदात्य का महाकाव्य है। रचनाकार ने इसमें विश्व मानवता के आध्यात्मिक उत्कर्ष और चारित्रिक उन्नयन का चित्रण अपने युगीन सभ्यता और संस्कृति के गरिमापूर्ण परिवेश में किया है। बौद्धधर्म और दर्शन को लोकग्राह्य बनाने के उद्देश्य से कवि ने महाकाव्य विधा को अपनाकर साहित्यिक मार्ग का अनुसरण किया है। इसमें मानवीय उदात्त मूल्यों को अत्यन्त सावधानी से पाठकों के समक्ष उपस्थापित कर कवि धर्म का सम्यक् निर्वहण किया है। अश्वघोष ने अपने इस महाकाव्य में परोपकार की भावना से ओत–प्रोत हृदय का साक्षात्कार कराया है। दुःखपूर्ण मानव–जीवन को दुःख से मुक्त कराने के लिए व्याकुल और व्यग्र हृदय के कारुणिक उद्गारों की मार्मिक अभिव्यक्ति कर प्रस्तुत महाकाव्य को कालजयी बना दिया है।

सौन्दरनन्दम् महाकाव्य मात्र संस्कृत भाषा में ही प्राप्त हुआ है। अश्वघोष की दूसरी कृति बुद्धचरितम् के समान तिब्बती सा चीनी भाषा में यह कृति अभी तक प्राप्त नहीं हुई है। इससे यह आशंका प्रबल हो जाती है कि ललित व श्रृंगार की बहुलता के कारण हो सकता है बौद्धों ने इसकी उपेक्षा की हो। डॉ. उमा शंकर शर्मा ''ऋषि'' ने सौन्दरनन्दम् महाकाव्य को बुद्धचरितम् से अधिक प्रौढ़ और सुगठित माना है। विभिन्न दृष्टि से यह भारतीय काव्य–परम्परा के निकट है। बुद्ध के सौतेले भाई नन्द की प्रकृति बुद्ध से भिन्न थी। वह कामवासना में लिप्त था। नन्द को कामवासना से निकालने के लिए बुद्ध और आनन्द आदि उनके शिष्यों ने जो शाश्वत प्रयास किया है, वही इस काव्य का विवेच्य है। सम्पूर्ण घटनाक्रम अत्यन्त प्रभावोत्पादक है। महाकाव्य में सर्वप्रथम अश्वघोष कपिलवस्तु नगर का सुन्दर उपाख्यान प्रस्तुत करते हैं। पुनः राजा शुद्धोदन का वर्णन तथा सिद्धार्थ और नन्द के जन्म का वृतान्त है। सिद्धार्थ की तपस्या और बुद्धत्व के वर्णन के बाद नन्द और उसकी भार्या सुन्दरी के भोग–विलास की प्रस्तुति की गई है। भिक्षा के लिए महल पहुँचे बुद्ध को नन्द की असावधानी और प्रमाद के कारण खाली हाथ लौटना पड़ता है। नन्द लज्जा और भय के कारण, भार्या से अनुमति लेकर बुद्ध को बुलाने के लिए महल से बाहर आता है। बुद्ध वापस लौटते तो नहीं हैं पर नन्द को अपना भिक्षा पात्र देकर नाटकीय रूप से उसे अपने साथ आगे लेते जाते हैं। अनन्य मनस्क नन्द को बुद्ध दीक्षित करते हैं। नन्द की पत्नी सुन्दरी नन्द के वापस लाटने का इन्तजार करते करते

बहुविध विलाप करती है। इधर कामपीड़ित नन्द भी सुन्दरी के वियोग में व्यग्र हो विलाप करता है। एक बौद्ध भिक्षु उसकी अवस्था देखकर उससे स्त्री–संसर्ग के दोषों का वर्णन करता है। नन्द पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता है और वह प्राचीन राजर्षि, महर्षि, मुनि आदि के दृष्टान्तों का आश्रय लेकर अपनी स्थिति को भिक्षु से स्पष्ट करता है। बौद्ध भिक्षु से बुद्ध को यह ज्ञात होता है कि नन्द वापस कपिलवस्तु के महल में अपनी प्रिया के पास जाना चाहता है। कवि ने यहाँ अलौकिक वर्णन कर यह दिखाया है कि बुद्ध नन्द को आकाश मार्ग से स्वर्ग के नन्दन वन में ले जाते हैं। रास्ते में एक वानरी को दिखाकर उससे अपनी भार्या से तुलना करने कहते हैं और फिर स्वर्ग की अप्सरा को दिखाकर उससे तुलना करने कहते हैं। कामी नन्द अप्सरा को पाने के लिए मचल उठता है। बुद्ध उससे कहते हैं कि यह अप्सरा तपस्या से उसे पाप्त हो सकती है। अप्सरा को पाने के लिए नन्द तपस्या करने लगता है। अप्सरा की प्राप्ति के लिए तप करते हुए नन्द का भिक्षु आनन्द उपहास करता है तब नन्द बुद्ध के पास जाकर निर्वाण का उपाय पूछता है। इसके बाद बुद्ध उसे विवेक का मूल्य तथा शील और इन्द्रिय संयम का महत्त्व बताते हैं। इन्द्रिय–जय के लिए आवश्यक कार्य, मानसिक शुद्धि की विधि, आर्य सत्य का उपदेश देते हैं। नन्द को इस मार्ग पर चलने से निर्वाण की प्राप्ति होती है। बुद्ध की आज्ञा से वह कपिलवस्तु लौटकर धर्मोपदेश करता है। इस प्रकार अश्वघोष ने अपूर्व कला–प्रज्ञा, वैदग्ध पूर्ण कल्पना और लोक विश्रुत बहुज्ञता का दर्शन अपने महाकाव्य में कराया है। लोकविश्रुत कथावस्तु को कवि ने बहुविध घटनाओं के नियोजन और स्वतःस्फूर्त अवान्तर कथाओं के संयोजन से कथाप्रवाह की गतिशीलता को अक्षुण्ण बनाने की सफल चेष्टा की है। वस्तुतः सौन्दरनन्दम् विचारप्रधान महाकाव्य है।

डॉ. भोला शंकर व्यास ने अश्वघोष के इस महाग्रंथ की बहुत प्रशंसा की है–यह 18 सर्गों का महाकाव्य है। नेपाल के राजकीय पुस्तकालय में प्राप्त दो हस्तलेखों के आधार पर म. म. हरप्रसाद शास्त्री ने इसका प्रकाशन बिब्लिओथेका इंडिका में कराया है। सौन्दरानन्द में गौतम बुद्ध के विमातृज भाई नन्द तथा उसकी पत्नी सुन्दरी की कथा है। नन्द तथा सुन्दरी एक दूसरे के प्रति उसी तरह आसक्त हैं, जैसे चक्रवाक तथा चक्रवाकी। एक के बिना दूसरे को चौन नहीं। नन्द तथा सुन्दरी के इस प्रेम की आधार–भूमि को लेकर नन्द की प्रवज्या का वर्णन कवि का अभीष्ट है। प्रथम तीन सर्गों में शाक्यों की वंशपरम्परा, सिद्धार्थ जन्मय सिद्धार्थ के अभिनिष्क्रमण तथा बुद्धत्व–प्राप्ति के बाद कपिलवस्तु आने का बड़े सरसरे ढङ्गसे, किन्तु ललित और काव्यमय वर्णन है। बुद्धचरित के पूर्वार्ध की कथा ही यहाँ संक्षेप में कही गई है। चतुर्थ सर्ग में नन्द तथा सुन्दरी के विहार का वर्णन है। विहार करते समय ही कोई दासी नन्द को आकर यह सूचना देती है कि बुद्ध भिक्षा के लिए उसके द्वार पर आये थे, पर भिक्षा न मिलने से चले गये। नन्द दुखी होकर क्षमा माँगने बुद्ध के पास जाना चाहता है। जाने के लिए वह सुन्दरी से विदा लेता है और सुन्दरीउसे इस शर्त पर छोड़ती है कि उसके विशेषक (चन्दनपत्रावली) के सूखने के पहले ही वह लौट आये। पञ्चम सर्ग में नन्द जाता है, मार्ग में बुद्ध को देखकर प्रणिपात करता है। बुद्ध उसके हाथमें भिक्षापात्र रख देते हैं। वे उसे ले जाकर धर्मदीक्षित कर भिक्षु बना देते हैं। अनिच्छुक नन्द के सिर के बाल घोट दिये जाते हैं और वह वेचारा टपाटप आँसू गिराता रहता है।"[22] यही इस महाकाव्य का सौंदर्य है।

निष्कर्ष

महाकवि अश्वघोष का लक्ष्य सामान्य कविता करना नहीं अपितु बौद्धधर्म का प्रचार करना है अतएव नायिका सुन्दरी का चित्रण कथानक में आवश्यकतानुसार ही किया है। चतुर्थ और षष्ठ सर्ग के अतिरिक्त सुन्दरी का दर्शन पाठकों को अन्यत्र नहीं होता है। चतुर्थ सर्ग में रूपसौन्दर्य की प्रतिमूर्ति, कामोपभोग में लिप्त, दैहिक आनन्द के साधन व साध्य के रूप में सुन्दरी लौकिक सुख सुविधाओं का भोग करने वाली राजकुमार नन्द की भार्या के रूप में चित्रित हैं। वहीं षष्ठ सर्ग में भगवान् गौतम बुद्ध से मिलने गये पति का वापस लौटकर नहीं आने से विह्वल तथा उसके संन्यास ग्रहण कर लेने की सूचना मिलने पर बेवश, लाचार, विरह की ज्वाला में दग्धा नायिका के रूप में चित्रित है। लौकिक काव्यों की कसौटी पर खरा उतने के लिए भी कवि ने नायिका सुन्दरी को पाठकों के सम्मुख उपस्थित किया है। षष्ठ सर्ग में कई ऐसे पद्य मिलते हैं जो सुन्दरी के व्यथित हृदय को प्रकाशित करते हैं। उदाहरणार्थ कुछ स्थल द्रष्ट्व्य हैं जिसमें सुन्दरी के चरित्र के विभिन्न पहलुओं पर अनयास ही दृष्टि चली जाती है।

सौन्दरनन्दम् महाकाव्य में कवि ने अपनी आवश्यकता के अनुसार ही पात्रों का सृजन किया है। कवि का मुख्य

उद्देश्य मोक्ष धर्मकी व्याख्या करना है अतएव पात्रों की संख्या विरल है। अश्वघोष ने नन्द के महच्चरित्र की सुन्दर कल्पना की है और उसकी सम्पूर्ण मनस्थितियों का अभूतपूर्व आकलन कर उसे उदात्त गरिमा प्रदान किया है। साथ ही उसे ही संसार संग्राम के विजेता के रूप में दर्शाया है। स्थितप्रज्ञ बुद्ध के अलौकिक गुणों को चित्रित कर महार्घता का दर्शन कराया है। विनायक, हितैषी, कारुणिक, विशेषदर्शिन् आदि विशेषणों से बुद्ध को अलंकृत किया है। शुद्धोदन के चरित्र को लोकरंजक एवं संस्कृति संरक्षक दिव्य राजा के रूप में प्रस्तुतकिया है, जो शुद्धकर्मा, जितेन्द्रिय, बलवान, सात्त्विक, विद्वान, बुद्धिमान, पराक्रमी, नीतिमान, धीर और सुमुख है। धर्मप्राण और वेदविहित आचार का अनुयायी शुद्धोदन आदर्श राजा के रूप में चित्रित हुआ है। कवि ने स्त्री पात्र के रूप में नन्द की भार्या सुन्दरी का चित्रण भी मनोयोग से किया है। पतिप्रेम में आसक्त नारी का सम्पूर्ण गुण उसमें विद्यमान है। संन्यासियों, भिक्षुओं तथा पुरवासियों का चित्रण प्रसंगानुसार यथोचित हुआ है। निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि महाकवि अश्वघोष ने अपने काव्य में अपूर्व एवं अलौकिक चरित्रों की सृष्टि कर महत् लक्ष्य व मानवतावादी उदात्त जीवन मूल्यों तथा संस्कृति के विराट स्वरूप की प्रतिष्ठा की है।

संदर्भ सूची

1. शर्मा, लीलाधर 'पर्वतीय'(2018) *भारतीय चरित कोश,* शिक्षा भारती, नई दिल्ली, पृ. 61।
2. त्रिपाठी, राम शंकर (संपादक) (1999) *सौन्दरनन्दम महाकाव्य,* सेंट्रल इंस्टिट्यूट ऑफ हायर तिब्बतन स्टडीज, सारनाथ, वाराणसी।
3. राजशेखर (1954) *काव्य मीमांसा,* द्वितीय अध्याय, शास्त्र निर्देश, पृ. 09, संस्करण तृतीय, राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, बिहार।
4. तत्रैव पृ. 10।
5. तत्रैव पृ. 10।
7. तत्रैव पृ. 11।
8. तत्रैव चतुर्थ अध्याय पदवाक्य विवेक पृ. 25।
9. तत्रैव।
10. तत्रैव।
11. तत्रैव, पृ. 31।
12. तत्रैव, पंचम अध्याय व्युत्पत्ति काव्यापकश्च, पृ. 41।
13. तत्रैव, पृ. 47।
14. तत्रैव, पृ. 48।
15. सौन्दरनन्दम् 1/1।
16. सौन्दरनन्दम् 1/43।
17. सौन्दरनन्दम् 10/21।
18. सौन्दरनन्दम् 10/11।
19. सौन्दरनन्दम् 04/07।
20. सौन्दरनन्दम् 06/10।
21. सौन्दरनन्दम्। 07/06।
22. व्यास, भोला शंकर (2017) *संस्कृत कवि दर्शन,* चौखम्भा, विद्या भवन वाराणसी, पृ. 38।

——==00==——